चीनी मिट्टी - रेशम पानी

अनघ शर्मा

चीनी मिट्टी - रेशम पानी

1."आह्लाद की रेशमी डोरी हो या विषाद का सूती बिछौना, स्मृति में बंद पहले प्यार का सूखा गुलाब दोनों में बराबर ही महकता है, उसने कहीं सुना था ये।" पर उसकी

स्मृति में सिर्फ गुलाब ही नहीं तमाम संसार बंद था और जिसकी महक उसके अंदर हर पल ठाठें मारती रहती थी।

कितनी बड़ी चौखट थी उस घर की जैसे किसी ने बुलंद दरवाजे की नकल उतार के जड़ दी हो। धूप-छाँव बिना उसे पार किए दालान में उतर नहीं सकते थे। वो बेल-बूटे, लकड़ी के फूल अब उसकी यादों में कुलबुलाते हैं। अजब-गजब सी आवाजें अंदर गूँजती रहती है जैसे खाली मैदान में हवा की सनसनाहटें। और यहाँ हॉस्टल के बंद कमरे में उसका दम घुटता था।

"कौन? कौन है वहाँ?" उसने चीखना चाहा पर बोल नहीं निकले।

अवचेतन में से एक आवाज गूँजी।

"मृत्यु, मृत्यु अवश्यंभावी है, जन्म टाला जा सकता है पर मृत्यु नहीं। हर हाल में आने वाली घड़ी है ये, किसी युक्ति से नहीं रोकी जा सकती।"

"कौन है खिड़की पर? तुम हो क्या चक्कूमल? हाँ तुम ही तो हो तुम्हारी अँगूठियाँ दिख रही हैं मुझे। उसने बुदबुदाहट में कहा। बुखार की झोंक उसे फिर अतीत में बहा ले गई।

"अच्छा सुनो! तुम भी मुझे औरों की तरह पंडित जी बुलाया करो, चक्कूमल नहीं।"

और तुम क्या बुलाओगे मुझे?"

"कीर्ति"

ऊँहूँ... मिस सरकार बुलाओ... पता है पिछली दफा इसी नाम से फ्रॉड किया था मैंने, और फिर पकड़ी भी गई थी, उसने कहा।

वो हँस पड़ा ये सुन के।

पर बुखार की दवाइयों ने उसमें हँसने की ताकत भी नहीं छोड़ी थी। उसने करवट ले खिड़की की तरफ पीठ कर ली और वापस औंघासूती में डूब गई।

चक्कूमल शुगर वल्द नानकमल शुगर वल्द मानकमल शुगर हाजिर हों... वो चौंक कर जाग गई। चौक की घड़ी ने तीन बजाए, चाँद बादल में सरक गया, प्यास ने गले में दस्तक दी। उसने पानी से एक गोली निगली और साथ ही चक्कूमल की याद भी।

पर कौन थे ये दोनों? पखावज से निकली कोई ताल? समय के बाहुपाश से छूटे कोई अजब किरदार? कोई नहीं जानता था कि ये दोनों कौन थे?

ये समय के अद्भुत दस्तावेज थे। वो वरक थे जिन पर जीवन का लिट्मस टेस्ट होना था।

खुली खिड़की में से किसी गाने की अस्प्ष्ट धुन तैरती हुई कमरे के भीतर चली आ रही थी। "याद अगर वो आए, ऐसे कटे तन्हाई।"

"सुनो जरा ये खिड़की बंद कर दो हवा आ रही है अंदर।" उसने साथ सोती हुई लड़की से कहा और नींद की नाव डूबने से पहले किसी की याद को दस्तक देते हुए सुना।

"शिरीष के फूल पढ़ी है?"

"नहीं"

"मैक्सिम गोर्की को?"

"नहीं"

"रागनियाँ सुनी हैं कभी तुमने?"

"नहीं"

"तुमने कुछ पढ़ा-सुना है कभी पंडित जी?"

"हाँ तुम्हें सुना है और तुम्हारी लकीरें पढ़ी हैं।"

"चुप रहो" उसने बनावटी क्रोध जताते हुए कहा।

"अच्छा ये बताओ हम कौन हैं?" चक्कूमल ने पूछा।

"हम! हम फ्रॉड हैं यार... तुम लोगों की झूठी लकीरें बाँचते हो, और मैं तो जिंदगी को अब तक ख्वाबफरोशी का जरिया ही मानती रही हूँ।"

"अच्छा जानते हो फ्रॉड करना क्या होता है?'

"नहीं"

"हम जितनी लफ्फाजी, जितना भरम, जितना धोखा दूसरे को देते हैं, उससे कुछ ज्यादा उसी वक्त खुद के साथ कर रहे होते हैं। हम अपनी जिंदगी के साथ सी-सॉ खेल रहे हैं पंडित जी।"

"और जिंदगी को ख्वाबफरोशी का जरिया मानने की कोई वजह?"

"कोई वजह नहीं, और यूँ भी दुनिया में जितनी भी वजहें हैं सब फजूल हैं और सलाहियतें तो बोझ हैं। मुझे बेवजह मरना है और सलाहियतों बिन जीना है, एकदम रॉ, बिन तराशे पत्थर की तरह। वैसे भी हम बिखरे हुए वरक हैं, कल को कोई जिल्दसाज आएगा हमें एक के ऊपर एक रखेगा, फिर हमें पाँव से, दाएँ-बाएँ से, सर से ठोंक-ठोंक कर अपनी जाने दुरुस्त करेगा। उसके बाद हमसे बिना पूछे हमें अपनी मनमर्जी आड़ा-टेड़ा सिल देगा। जिंदगी सिलने से पहले पूछने का मौका नहीं देती। अगर मौका दे तो दुनिया भर की किताबों के दो-तिहाई वरक कहेंगे की हमें आजाद रहने दो, उड़ने दो। पर कुछ वरक ढीठ होते हैं ये इतनी जोर से अपने कंधे फड़फड़ाते हैं कि जिल्द का धागा टूट जाएँ... हाँ तुम कह सकते हो कि उन्होंने खुदकुशी कर ली। मैं इसी तरह का वरक हूँ पंडित जी जिसे आजाद रहना है। मैं कल को चाहूँ तो तुम्हें भी छोड़ के जा सकती हूँ।"

वो अवाक उसके चेहरे को देखता रह गया।

2.माई की जै, माई की जै... हर ओर से उठती आवाजे उसके अंदर सिरहन पैदा कर रही थी। उसने अपनी पसीजी हथेलियों को देखा फिर एक दूसरे में यूँ चिपका दिया जैसे सामने बैठी भीड़ को नमस्कार किया हो। पंडाल में दूर-दूर तक औरतें कतार की कतार दम साधे माई को सुनने के लिए बैठी थी।

इतनी भीड़ देख कर वो सकपका गई, सोचा कि भाग जाए पर दुनिया को ठगने वाली यूँ जरा सी भीड़ देख भाग जाए तो उसकी बरसों की ट्रेनिंग पर लानत होगी।

काली किनारी की सफेद ताँत में उसने खुद को सामान्य से अलग दिखने का एक प्रयास किया था और जिसमें वह सफल भी हो गई थी। कम उम्र सी एक अद्भुत चमक थी उसके चेहरे पर, जैसे शांत निर्मल ईश्वर की छाया पड़ गई हो। पर वो जानती थी ये कमाल उसके प्रसाधन भोगी हाथों का है।

उँचे तख्त पर बैठ कर उसने एक नजर सामने डाली, एक हुजूम को अपने सामने नतमस्तक देख उसके आत्मविश्वास की पतवार वापस तन गई। उसने सधी आवाज में कहना शुरू किया।

"प्रेम हर मस्तिष्क में एक गर्भाशय रोप देता है। इस गर्भाशय में अनगिनत यादें संतति के रूप में पनपती रहती हैं। प्रेम सफल तो अच्छी, सुखद यादों की संतान जन्म लेती है और अगर असफल तो बुरी, दुखद यादों की संतान जन्म लेती है। प्रेम में संतति का जन्म निश्चित है और संतति कैसी हो ये प्रेम की सफलता-असफलता पर निर्भर करता है।"

भीड़ दम साधे सुनती रही उसे। कहीं पत्ता भी खड़कने की आवाज नहीं थी। गूँज रही थी तो बस माई की आवाज। उसने देखा उसके शब्दों का जादू चल गया और सब मंत्रमुग्ध से जड़ हो गए हैं। वो झटके से उठी और मुड़ कर वापस अंदर चली गई। ये नई अदा सीखी थी आजकल उसने, एक रहस्य का माहौल तैयार करो और फिर सबको उस आवरण में छोड़ कर निकल जाओ। पीछे जय-जयकार की आवाज गूँजती रहे।

अंदर कमरे में उसने देखा कि चक्कूमल मेज पर चढ़ कर बैठा हुआ है।

"आओ! बहुत बढ़िया बोला तुमने। जै-जै की आवाज यहाँ तक आ रही है।"

"थक गई।"

"हूँ"

"अच्छा, आओ यहाँ बैठो मेरे पास।" उसने मेज पर एक तरफ खिसकते हुए कहा।

"नहीं ठीक है, पहले जरा ये मेकअप उतार लूँ।"

"एक सलाह दूँ।"

"क्या?"

"यूँ ही प्रेम का पथ दिखाती जाओ लोगों को, भला होगा का।"

बालों में से जूड़ा पिन निकालते-निकालते हाथ एक दम रुक गए उसके, चेहरे पर हल्की विद्रूप की लहर आई और आँखों में ठहर गई।

"क्या बचता है बाद में बवंडरों के, आँधियों के, बगूलों के...? कुछ भी नहीं सिवाय होठों पर रेत और हलक में चटकती प्यास के... खुलूस के नाम पर पंडित जी आप लोगों को प्यार की सीख बाँटते हैं यानि की बवंडर बाँटते हैं, आँधी बाँटते हैं, बगूले बाँटते हैं, प्यास बाँटते हैं। मुझे इसलिए आप की दो कौड़ी की नसीहतों में राई-रत्ती भी इंट्रेस्ट नहीं पंडित जी।"

जानते हो ये प्रेम हल्की डोरियों की तरह पीठ पर कसा होता है। धीरे-धीरे ये डोरियाँ घिस जाती हैं, बदरंग हो जाती हैं, टूट जाती हैं... एक बार ये टूटी तो कोई भी दर्जी इनका टाँका नहीं जोड़ सकता। इनके टूटने से पीठ और छाती दोनों का नंगापन चमकने लगता है। कोई बिरला ही अपनी पीठ पर ये डोरियाँ कसी रख पाता है। कोई बिरला ही प्रेम निभा पाता है चक्कूमल।

लाउडस्पीकर से आता शोर अब थम गया था। नेपथ्य का जय-जयकार भीड़ के साथ विदा ले चुका था। अब यूँ लगता था मानो वो दोनों ही अकेले छूट गए हो यहाँ और बाकी सब परिधि लाँघ गए हों।

"जरा चारमिस तो पकड़ाना।" उसने कहा।

"तो फिर हम साथ क्यों हैं? उसने क्रीम पकड़ाते हुए पूछा।

"प्यार के लिए। "

"मतलब?"

"मतलब कि हम अपनी जरूरतों को प्यार का नाम पहना देते हैं। हम अपनी सुविधा के लिए अलग-अलग चीजों को एक दूसरे पर आरोपित कर देते हैं।"

"कैसी जरूरतें?"

"देह की, पैसों की, हँसने-बोलने की, कपड़े-लत्तों की, खाने-पीने की। एब्सकोंडर हैं हम तुम, भगोड़े हैं अपने-अपने जीवन से। मैं एक शादीशुदा लड़की जो अपनी नीरस उबाऊ शादी से भाग आई धोखाधड़ी करके, वो तो भले लोग थे कि कोई तमाशा नहीं किया उन्होंने। और तुम गणित के मास्टर जो चार ट्यूशन भी नहीं जुटा पाया अपने लिए। अब थक-हार के पिता की पंडिताई को ही आगे बढ़ा रहे हो न। बोगनबेलिया के कई-कई रंग वाले फूलों को एक साथ सजाने से कहीं इंद्रधनुष बनता है, उसके लिए धूप-पानी की जरूरत होती है। मैं और तुम खेत-मंडवे की मिट्टी और पोखर का पानी

हैं जिन्हें अपने ऊपर, अपने असली रंग-रूप पर बेतरह शर्म है, इसलिए जो अपने ऊपर 'चीनी मिट्टी-रेशम पानी' का मुलम्मा चढ़ाए रखते हैं। हमारी जिंदगी मेटाफर पर टिकी है। हम हर बीतते क्षण, बीतते पल जीवन के पुराने बीते हुए या बीतने वाले बदरंग हिस्से को किसी न किसी काल्पनिक सुंदर चीज से बदल देते हैं। तुम मेरे झुर्रियों वाले चेहरे को चाँद कहते हो और मैं तुम्हारी साँसों को आग की लपट। पर जानते हो चक्कूमल मैंने तुम्हें कभी नहीं बताया कि तुम्हारी साँसें कितनी ठंडी हैं और तुम कितने बुरे खर्राटे लेते हो। पता है मैं जब-जब तुम्हारे रुकी एक दिन भी इन आवाजों की वजह से सो नहीं पाई। न ही तुम ने ही कभी कहा की ये झुर्रियाँ मुझे बदसूरत बना रही हैं।"

"हम फ्रॉड हैं बेहतर हो एक-दूसरे को छोड़ दुनिया को ठगें... ये चाँद-वाँद छोड़ो और असल जिंदगी में लौट आओ पंडित जी।"

"अच्छा! तुम्हारा लेक्चर खत्म हो गया हो तो सोने चलें।"

"नहीं, थक गई हूँ, आज यही अपने कमरे में सोऊँगी। चलो बाय, गुड नाइट।"

"बाय।"

एक सुबह वो भाग गई, सब ले कर फरार, उसके सर पंडाल और होटल का खर्च और बटुए में सात हजार रुपये छोड़ कर। अब चाहे वो घर जाएँ या चीजों का बिल चुकाए।

3.जून के नौ तपे के बाद भी अब तक रातें अब तक लू के असर से दहक रही थी। ऐसी ही एक गर्म और अँधेरी रात में वो पराए, अनजान शहर में भटक रहे थे, जैसे अज्ञातवास में छुपे पांडवों को ढूँढ़ रहे हों। रिक्शे पर बैठे नानकमल शुगर ने इधर-उधर देखा,माथे पर आया हल्का पसीना कुर्ते की बाँह से पोंछा और आँखें अँधेरे में यूँ गड़ा दी मानो समय के पार झाँक रहे हो।

रात के निविड़ अँधेरे में निस्पंदित चुप्पी कभी-कभी किसी जुगनू की चमक से स्पंदित हो उठती थी। थोड़ी देर बाद ही सही पर नानकमल शुगर की आँखें उस अँधेरे में चीजे देखने की अभ्यस्त हो गई। कुछ दूर ईंटों की एक लंबी मीनारनुमा चिमनी के पास एक बल्ब टिमटिमा रहा था, और कहीं पास से पानी के तेज बहने की आवाज आ रही थी। परिवेश से परिचित होने के बाद उन्होंने एक बड़े दरवाजे के पास रिक्शा रुकवा लिया।

"क्यों भैया तेलमील कंपाउंड का लड़कियों का हॉस्टल ये ही है?"

"है तो ये ही, पर किससे मिलना है पंडित जी?" चौकीदार ने पूछा।

"हमाई बिटिया है यहाँ।"

"नाम?"

"कीर्ति... कीर्ति शुगर नाम है। जरा बुलवा देओ भैया।"

"पंडित जी इतनी रात में तो लड़कियों से कोई मिल नहीं सकता, सुबह मिलना अब।"

"तो अब रात में कहाँ वापस जाईं हम?"

"कहुएँ नाईं, यहीं बैठो हमाई बेंच पे।"

"अच्छा ये इतनी जोर का पानी कहाँ बह रहा है भैया?"

"ये सामने जो देख रहे हो पंडित जी ये गत्ता फैक्ट्री है, गत्ता गलाया जाता है यहाँ, सो वाई का गंदा, सड़ा पानी बहता रहता है।"

"काम तो इहाँ अच्छा है तुम्हारे शहर में।"

"तुम कहाँ के रहने वाए हो पंडित जी?"

"मुजफ्फर नगर।"

"हम्म्म्म्म्म्म, तंबाकू खाओ पंडित जी?"

नहीं, तुम्ही खाओ, हमने तो सालों हुए छोड़ दी। "

"खायलो पंडित जी मैनपुरी की कपूरी है, अच्छे-अच्छे तरसते हैं इसके लिए।"

"अच्छा लाओ चुटकी भर खिला दो फिर।"

"एक बात बताओ पंडित जी?"

"क्या?"

"ये शुगर कौन पंडित होते हैं? पहली बार सुन रहे हैं।"

"नईं भई वो तो हमाए बाप शुगर मिल में मुलाजिम थे तो गाँव-खेड़ा में शुगर के नाम के नाम से बुलाए जाने लगे।"

"अच्छा, राजेश पायलट की तरह... हीहीही।"

"सुनो क्या हम सो लें इस बेंच पर?"

"सोओ-सोओ पंडित जी हम तो वैसे भी राउंड लगाने जा रहे हैं।"

अगली सुबह का सूरज बड़ी देर से निकला या पंडित नानकमल शुगर देर तक सोते रहे। देर गए जब उठे तो पूरा हॉस्टल लड़कियों के रंग-रूप से गुलजार था, पर एक वो ही नदारद थी जिसे ढूँढ़ने वो बड़ी दूर से इस देहरी पर आ खड़े थे। दिन से दोपहर हुई, और अब तो दोपहर भी साँझ में ढलने को तत्पर दीख रही थी। बैठे-बैठे पंडित जी अब ऊबने लगे थे, और यूँ भी सुबह से लेकर अब तक उनकी कई बार पड़ताल की जा चुकी थी।

वो अनमने से बैठे थे कि एक लड़की उनके सामने आ खड़ी हुई।

दोनों ने एक-दूसरे को देखा और बीच में आए समय के लंबे आठ सालों के अंतराल को पार कर के लड़की ही पहले बोली।

"बड़े पंडित जी आप?"

"पहचान लिया बिटिया, हम तो सोचे थे कि जेन इतने सालों बाद पहचानोगी भी या नहीं।"

"कहिए, कैसे आना हुआ?"

"तुम्हारी मदद चाहिए।"

"कैसी?"

"तुम चलो हमारे साथ वापस और चल कर पुराना काम सँभाल लो।"

"तो मेरे पास क्यों आए हैं? चक्कूमल से कहिए, वो तो पहले ही सँभाल रहे थे काम को या साध्वी के आने से ग्लैमर आ जाएगा प्रवचनों में। "

"वो कहाँ रहा अब।"

"मतलब"

"तीन साल हुए पीलिया बिगड़ गया था। बचा नहीं पाए।"

"ओह!"

दुख की एक छाया चेहरे पर जरा देर रुक कर वापस लौट गई। पल भर में ही वो अपने रंग में लौट आई।

"ये तो आज पहली बार देख रही हूँ बड़े पंडित जी, कि बछड़ा मर जाएँ तो गैया खुद मेमने को दूध पिलाने चली आए।"

वो सकपका गए।

"चल के गद्दी सँभाल लो तुम।"

"मैं ऐसे नहीं जा सकती पंडित जी।" कुछ देर चुप रह कर वो बोली। "क्यों?"

"यहाँ मुझ पर एक केस चल रहा है। पुलिस को सत्तर हजार चाहिए उसे रफा-दफा करने को। आप इंतजाम कर दो तो मैं इससे फारिग हो कर साथ चल लूँगी, और हाँ आगे इसके बाद जो मुनाफा वो फिफ्टी-फिफ्टी। ये सत्तर हजार अगल है पंडित जी, ये वापस नहीं होगा।"

4.समय की चकफेरियों में जो सामान्य हो गए उन्होंने अपने लिए गंगा के तट तलाश लिए... जो विलक्षण बचे रह गए उन्होंने अपने लिए आकाशगंगाएँ चुनी उनके उदगम-समागम के छोर ढूँढ़ने को। फिर वो चाहे शेक्सपीयर की कोई नायिका हो, कामू का कालिगुला या दिनकर का कर्ण... ये बचे रहे अपने सामान्यीकरण के होने से। ये विवश रहे जीवन के बजाय समय की प्रतिच्छायाएँ जीने को। ये समय के आगे थे इसलिए इतिहास में बदल दिए गए। इन्होंने प्रेम माँगा था सो पीड़ा के भागी बने। पर हमारा क्या? जो इस सामान्य और विलक्षणता के बीच के खाने में आ पड़े। जिन्हें न ही कभी गंगा का तट ही मिला और ना ही कोई आकाशगंगा। हम शिव की तरह गरलपान को बाध्य रहे। हम साधनहीन लक्ष्य रहे, ऐसे पड़ाव रहे जिन्होंने बीच रेगिस्तान में लोगों को सुस्ताने के लिए छाँव तो दी पर कभी नख्लिस्तान बनने की हिम्मत नहीं जुटा पाए।

डायरी लिखते-लिखते जाने कब उसकी आँख लग गई। आजकल उस पर ऐसी थकान बड़ी तारी रहती थी। उठते-बैठते, चलते-फिरते उसे ऐसा लगता था मानो शरीर की

सारी ताकत किसी अनजाने-अदृश्य रास्ते से बाहर जा रही हो। देर गए जब वो जागी तो देखा सामने एक नौजवान बैठा हुआ है।

"आ गए तुम, समय के बड़े पाबंद हो।"

"जी शुक्रिया। बुखार कैसा है अब आपका?"

"अब तो ठीक है काफी। बुखार की वजह से तुम्हारा काम काफी डिले हो गया न। वैसे क्या करोगे मेरा इंटरव्यू छाप कर? एक सलाह मानो छोड़ दो ये आइडिया, पचड़े में फँस जाओगें।"

"क्या नहीं पता लगना चाहिए लोगों को आपके बारे में? कब तक गुमनाम रहेंगी।"

"किसी झंझट में मत फँसा देना मुझे ये सब छाप के।"

"निश्चिंत रहिए।"

"फिर क्या हुआ?"

"किसमें?"

"आपकी जीवन यात्रा में।"

"बस यात्रा थी, अब समाप्ति की ओर पहुँच रही है। अगले अक्टूबर में बासठ की हो जाऊँगी। समय है बीत ही जाता है।"

"फिर भी बताइए तो।"

"क्या?"

"पंडित जी आए वापस?"

"हाँ पंद्रह दिन बाद नानकमल वापस आए सत्तर हजार ले कर और मुझे साथ ले गए। आश्रम भी अब पहले जैसा नहीं रह गया था। हालाँकि पुराना पक्का हिस्सा अब तक काफी कुछ वैसा ही था, जिसमें कहीं-कहीं खुली जगहों को बाँस और कनातों से ढँक कर छोटे पंडाल जैसे रूप में बदल दिया गया था।"

"फिर?"

"आश्रम वापस जा कर कई महीनों तक गीता के पाठ सुनाया करती थी मैं। भीड़ तो जुट रही थी पर उतनी नहीं जो नानकमल को संतुष्टि दे सके। फिर एक दिन वो एक नए आईडिया के साथ आ गए।"

"क्या?"

"यही कि मुझे गीता पाठ की आवृत्तियाँ छोड़ कर आने वाली औरतों को होमसाइंस टाइप के लेक्चर देने चाहिए मसलन शादी संबंधी, पति को खुश रखने संबंधी, सेक्स संबंधी। कई बार मुझे यूँ भी लगता था कि चक्कूमल के इलाज में जान-बूझकर ढीलाई बरती गई होगी, पर मैंने कभी जाँच-पड़ताल करने की कोशिश नहीं की।

"क्यों?"

"पैसा! यूँ भी उसके होने न होने से मुझे कोई फर्क नहीं पड़ता था और फिर आश्रम में कोई तकलीफ भी नहीं थी। मजे से गुजर रही थी जिंदगी। और वो कोई ट्रैप नहीं था जहाँ मुझे छटपटाहट होती। मैंने खुद चुना था वहाँ रहना,पहले भी जब छुटमलपुर से आई थी तब भी रही थी उसी आश्रम में चक्कूमल के साथ।"

"छुटमलपुर?"

"हाँ सहारनपुर के पास एक छोटा सा गाँव था तब तो। चक्कूमल की ननिहाल थी वहाँ।"

"और आप?"

"मैंने शादी की थी वहाँ। पर जाने कैसे पता लग गया उन्हें की ये धोखा-धड़ी की शादी है। वहीं पहली बार चक्कूमल से मिलना हुआ, तब तक तो उसे भी नहीं मालूम था कि सब माजरा क्या है। फिर एक दिन में उसके संग चली आई।"

"कुल कितने समय आप आश्रम में रहीं?"

"सत्रह साल। पहले तीन और दूसरी बार लगभग चौदह साल।"

"तो आप लौट क्यों आई वापस?"

"पहले जब आई थी तो बंधन से आजादी चाहिए थी और दूसरी बार घृणा, ग्लानि। ये ग्लानि, जुगुप्सा, घृणा कभी भी घेर सकते हैं आपको। जब नानकमल आश्रम के महंत

बने तो थोड़ी निराशा हुई थी मुझे, काश मैं बन पाती। पॉवर का बड़ा चार्म लग रहा था। पर बाद में जब सोचा तो लगा अच्छा ही हुआ जो नहीं बनी। आश्रम के महंत को बाद में समाधि लेनी पड़ती है। जब वो भी नहीं रहे तो इस पूरे खेल, पूरी प्रक्रिया की प्रति जाने क्यों मन में एक जुगुप्सा का भाव पैदा हो गया। और यूँ भी ये गॉडमैन से गॉड बनने का खेल बड़ा यंत्रणापूर्ण होता है। वो हिम्मत नहीं बची थी।"

"और यहाँ?"

"यहाँ तो अभी तीन साल की नौकरी और बची है, फिर ये हॉस्टल भी है। आड़े वक्त बड़ा काम आता रहा है ये हॉस्टल मेरे।"

"जी"

'अच्छा चलूँ मैं अब।"

"हाँ, भाई जाओ। अच्छा-अच्छा लिखना, छापना सब। जब छप जाएँ तो पढ़वाना भी मुझे, वर्ना इतनी बार यहाँ आने का क्या फायदा।"

"जी जरूर।"

"अच्छा सुनो जाते हुए पर्दा गिरा जाना, और हाँ जरा वहाँ टेबल से चारमिस भी पकड़ा देना।"

https://www.hindiadda.com/chini-mittee-resham-pani/